# अध्याय VII: योग (YOGA)

**"**प्रत्येक आत्मा संभावित रूप से दिव्य है। इस आंतरिक देवत्व को बाह्य और आंतरिक प्रकृति को नियंत्रित करके प्रकट करना ही जीवन का एकमात्र लक्ष्य है। इसे कर्म, उपासना, मानसिक नियंत्रण (योग), या दर्शन (ज्ञान) में से किसी एक, अनेक या सभी के द्वारा प्राप्त करें और मुक्त हो जाएँ। यही धर्म का संपूर्ण सार है। मत, सिद्धांत, अनुष्ठान, पुस्तकें, मंदिर या बाह्य रूप केवल गौण विवरण हैं।**"**— स्वामी विवेकानंद, राजयोग 1
पूर्व के अध्यायों में प्रस्तुत किए गए विवेचन ने हमें पूर्णता और सुख के महान आदर्श को प्राप्त करने के लिए विभिन्न धर्मों द्वारा निर्धारित विधियों की गहरी खोज के लिए तैयार किया है। 1 हम आत्मा के अन्वेषण में अब उस बिंदु पर पहुँच चुके हैं जहाँ बौद्धिक तर्कों और सिद्धांतों के स्थान पर व्यावहारिक उपलब्धियों को स्थापित करना आवश्यक है; जहाँ आत्म-साक्षात्कार को व्यावहारिक अनुभव के क्षेत्र में लाया जा सके। 1 अब हम **'**योग**'** की सीमाओं पर खड़े हैं, जो ईश्वर और मनुष्य के बीच का सेतु है। इसकी सहायता से मनुष्य न केवल आनंदमयी लक्ष्य की झलक पा सकता है, बल्कि इस संसार की गहरी खाई को पार करके स्वर्ग के प्रांगण में व्यक्तिगत रूप से प्रवेश भी कर सकता है। 1 हमारा उद्देश्य यहाँ योग के व्यावहारिक नियमों का कोई अत्यंत विस्तृत विवरण देना नहीं है, बल्कि हम इस विज्ञान की प्रकृति, इसकी व्यावहारिकता और इसके मूलभूत सिद्धांतों की संक्षेप में विवेचना करेंगे। 1
पिछले अध्यायों में यह दिखाया जा चुका है कि आत्मा के दुःख, बंधन और पीड़ा का एकमात्र कारण केवल अविद्या **(**अज्ञान**)** है। 1 इसी अज्ञान के कारण आदम अदन के बगीचे में ईश्वर की संगति में विचरने के बजाय वहाँ से बाहर निकाल दिया गया था; और इसी अज्ञानता के कारण स्वर्ग हमारे लिए खो गया है। 1, 2 संसार के प्रायः सभी उद्धारकों और पैगंबरों ने यह सिखाया है कि मुक्ति का प्राथमिक साधन आत्म**-**ज्ञान है। 2 परंतु यह केवल सामान्य रूप से सत्य है, क्योंकि सत्य को केवल बौद्धिक रूप से जान लेना एक बात है और उसे जीवन में प्रत्यक्ष अनुभव करना दूसरी बात है; क्योंकि आत्म-साक्षात्कार के लिए जो सबसे पहली आवश्यकता है, वह है सत्य में अटूट और अडिग विश्वास। 2 मनुष्य के भीतर वह अदम्य विश्वास होना चाहिए जिसे ईसा मसीह ने 'अजेय श्रद्धा' (Faith) कहा था; और इस श्रद्धा की एकमात्र कसौटी यह है कि मनुष्य इसके लिए अपने जीवन को भी दांव पर लगाने से न हिचकिचाए। 2
जब तक श्रद्धा दुर्बल होती है और संदेह का कीटाणु नष्ट नहीं होता, तभी तक शिष्य 'मृतकों को दफनाने' के लिए छुट्टी मांगता है। 2 परंतु जब हृदय सत्य के विश्वास से पूरी तरह भर जाता है, तब मनुष्य समझ जाता है कि "जो कोई हल पर अपना हाथ रखकर पीछे की ओर देखता है, वह ईश्वर के राज्य के योग्य नहीं है" (ल्यूक ix. 62) और वह बिना किसी संकोच के "मृतकों को अपने मृतकों को दफनाने के लिए" छोड़ देता है (मैथ्यू viii. 22)। 2 दफन होने योग्य कौन है? "मैं" (आत्मा) या भौतिक शरीर? मनुष्य वास्तव में "मैं" (आत्मा) है और शरीर केवल मृत पदार्थ का ढांचा है। 2 यह "मैं" कभी नहीं मरता और न ही इसे कभी दफनाने की आवश्यकता होती है। 2 इसलिए, जो जीवन (अमरता) में प्रवेश करना चाहता है, उसे मृत शरीरों को दफनाने जैसे कार्य उन लोगों के लिए छोड़ देने चाहिए जो आध्यात्मिक रूप से मृत हैं, भले ही वे शारीरिक रूप से जीवित और घूमते हुए दिखाई देते हों। 2

## अविद्या का भ्रम और सम्मोहन

योग का उद्देश्य हृदय में सत्य का ज्ञान देना और साथ ही एक अपरिवर्तनीय, अमर विश्वास का निर्माण करना है। 2 'योग' का शाब्दिक अर्थ है मिलन या मनुष्य का ईश्वर से जुड़ना, या अधिक सही अर्थों में कहें तो—इंद्रियों के विषयों से अर्थात् इस नश्वर दृश्यमान संसार से विलग (वियोग) होना। 2 यह वह विज्ञान है जो साधक को सरल चरणों और सीढ़ियों के माध्यम से आत्म-साक्षात्कार की उच्चतम ऊँचाइयों तक ले जाता है, जहाँ वह अपने खोजे जा रहे आदर्श के आमने-सामने खड़ा हो जाता है। 2
परंतु कठिनाई यह है कि किसी व्यक्ति को इस मार्ग पर पैर रखने या आत्म-ज्ञान प्राप्त करने के लिए प्रेरित करना आसान नहीं है। 3 भौतिक शरीर के साथ अपने तादात्म्य (Identity) के सम्मोहन के कारण, वह जो अपने शुद्ध स्वभाव में संपूर्ण ब्रह्मांड का पूजनीय स्वामी है, आज एक दास की तरह व्यवहार कर रहा है; स्वामी अपने ही घर में

कुली का काम कर रहा है और जब उसे बताया जाता है कि वह स्वामी है, तो वह बुरा मान जाता है! 3 इस घातक बंधन को काटने के लिए क्या किया जाए?

योग हमें सिखाता है कि ज्ञान ही एकमात्र ऐसा साधन है जिससे यह सम्मोहन टूट सकता है। 3 स्पष्टतः, हमें अपनी श्रद्धा और विश्वास की स्थिति को प्रभावित करना होगा, ताकि हम अपने मन से हीनता और 'द्वैत' के झूठे संस्कारों को साफ कर सकें। 3 परंतु विश्वास को तर्क और ज्ञान के बिना बदला नहीं जा सकता। 3 अतः केवल ज्ञान ही वह अचूक अस्त्र है जो हमारे गलत संस्कारों पर प्रहार कर सकता है और झूठे विश्वासों को नष्ट कर सकता है। 3 आइए इस सिद्धांत को समझाने के लिए कुछ व्यावहारिक उदाहरण लें:

1. मान लीजिए कि एक बच्चा अंधेरे कमरे में पड़ी हुई रस्सी को देखकर उसे सांप समझ लेता है और डर के मारे उस कमरे में जाने से मना कर देता है। 3 आप उस बच्चे के मन से इस डर को कैसे दूर करेंगे? क्या आप उसे अपनी गोद में उठाकर उस कल्पित सांप के पास नहीं ले जाएंगे और उसे हर तरह से यह विश्वास नहीं दिलाएंगे कि उसका डर केवल एक भ्रम था? 3
2. मान लीजिए कि किसी व्यक्ति को सम्मोहित (Hypnotize) करके यह विश्वास दिला दिया गया है कि उस पर किसी भूत का साया है, और वह अत्यंत दयनीय स्थिति में है। 4 आप उसके लिए क्या करेंगे? क्या आप उसे उस सम्मोहन की नींद से 'जगाएंगे' नहीं और उसे यह नहीं दिखाएंगे कि वह भूत केवल उसके मन की कल्पना थी? 4

मानव जाति भी इसी प्रकार सम्मोहित है कि वे पापी, हीन, अज्ञानी जीव हैं, जो प्रकृति की शक्तियों और भाग्य के थपेड़ों को सहने के लिए ही पैदा हुए हैं। 4 यहाँ हमारा क्या कर्तव्य है? क्या हमें उनके साथ वैसा ही व्यवहार नहीं करना चाहिए जैसा हमने ऊपर के दो मामलों में किया था? बस उन्हें जगाने की आवश्यकता है, ताकि वे स्वयं देख सकें कि यह सब केवल एक महान भ्रम (Delusion) है। 4 उस बच्चे की तरह, मनुष्य भी यह मानता है कि उसके हृदय रूपी कक्ष में पाप का काला सर्प छिपा बैठा है, और इसी कारण वह दुःखी है। 4 इस झूठे संस्कार को मिटाने का केवल एक ही मार्ग है—उसे यह विश्वास दिलाना कि उसके हृदय में कोई सर्प नहीं, बल्कि स्वयं परमात्मा विराजमान है। 4 बुद्ध, ईसा मसीह या हज़रत मुहम्मद के वचनों के प्रमाण देकर उसे आश्वस्त करना तब तक पर्याप्त नहीं होगा जब तक कि वह स्वयं विचार और प्रयोग करके पूर्ण संतुष्टि प्राप्त न कर ले। 4 स्वामी रामतीर्थ इस विषय में लिखते हैं:

*"यदि सूर्य बंबई के आमों से कहे कि मैंने अपनी गर्मी और प्रकाश केवल हिमालय के देवदार के वृक्षों पर ही प्रकट किया है, तुम बंबई के आमों को उसी प्रकाश के सहारे बढ़ना होगा, तो बंबई के आम नष्ट हो जाएंगे। न तो मैदान की लिली के फूल उस धूप पर जीवित रह सकते हैं जो बगीचे के सेबों पर चमकी थी, और न ही शेक्सपियर, न्यूटन या स्पेंसर बुद्ध, मसीह या मुहम्मद को दिए गए ज्ञान के सहारे जी सकते थे। इसी प्रकार हमें अपनी समस्याओं को स्वयं सुलझाना होगा और अपनी आँखों से देखना शुरू करना होगा, बजाय इसके कि हम अतीत के पूजनीय ऋषियों और संतों की आँखों से झांकते रहें।"* 4

केवल प्रामाणिक ग्रंथों को उद्धृत करके साधक को संतुष्ट नहीं किया जा सकता। 4 पूर्ण विश्वास केवल संदेह के पूर्ण विनाश से ही आता है, जिसके लिए अपनी संतुष्टि के लिए गहन खोज की आवश्यकता होती है। 4 वैज्ञानिक पद्धतियों द्वारा प्राप्त होने वाले विश्वास की दृढ़ता और आत्म-सुझाव (Auto-suggestion) के मूल्य के बारे में डॉ. हडसन (*The Law of Mental Medicine*) में लिखते हैं:

*"वैज्ञानिक पद्धतियों में भी श्रद्धा उतनी ही आवश्यक है जितनी किसी अन्य पद्धति में। परंतु वैज्ञानिक पद्धतियों के तीन विशिष्ट लाभ हैं। पहला यह कि आवश्यक श्रद्धा को अध्ययन और तर्क द्वारा प्राप्त किया जा सकता है; दूसरा यह कि यह श्रद्धा पूर्ण होती है क्योंकि यह ज्ञान से उत्पन्न होती है और तर्क से पुष्ट होती है; और तीसरा यह कि इस प्रकार प्राप्त श्रद्धा एक स्थायी संपत्ति बन जाती है क्योंकि इसके विरोध में वस्तुपरक मन (Objective mind) से कोई विपरीत विचार उठकर इसकी शक्ति को कमजोर नहीं कर सकता... इसलिए वैज्ञानिक सत्यों पर आधारित सुझाव सबसे अधिक प्रभावशाली और स्थायी होते हैं।"* 4

योग इस बात पर बल देता है कि प्रत्येक मनुष्य को अपने मोक्ष के लिए स्वयं पुरुषार्थ करना होगा। 4 इस पद्धति में हर किसी को अपने पैरों पर खड़ा होना पड़ता है; कोई भी अपने पड़ोसी के सहारे की उम्मीद नहीं कर सकता। 4, 5 यदि आधे दर्जन लोगों में से केवल एक व्यक्ति को सम्मोहन से मुक्त किया जाए, तो यह उन लोगों के लिए किसी काम का नहीं है जो स्वयं उस चक्र से बाहर नहीं निकलते। 5 प्रत्येक को अपने हृदय के ताले पर 'ज्ञान की

कुंजी' स्वयं लगानी होगी जहाँ अज्ञान का सर्प छिपा हुआ है। 5 आपको अपने संदेहों को एक-एक करके स्वयं ही दूर करना होगा, क्योंकि आपके संदेह क्या हैं, यह आपके सिवाय कोई नहीं जानता। 5 यही योग का पहला सिद्धांत है, जो अंततः आत्मनिर्भरता (Self-reliance) का फल देता है। 5 विज्ञान की अद्भुत सफलता भी इसी आत्मनिर्भरता के कारण है। 5

## ध्यान और एकाग्रता (Meditation and Concentration)

ज्ञान प्राप्त करने के लिए दूसरा अनिवार्य तत्व ध्यान **(Meditation)** है, जिसके बिना कोई ज्ञान संभव नहीं है। 5 दूसरों द्वारा निकाले गए निष्कर्षों को सही मान लेना केवल एक उधार लिया हुआ ज्ञान है। 5 जब तक हम स्वयं उस विषय पर विचार नहीं करते, हम कभी निश्चित नहीं हो सकते और संदेह का कीटाणु जीवित रहता है। 5 संदेह को समूल नष्ट करने का एकमात्र मार्ग यह है कि जिस विषय पर ध्यान करना है, उसके सभी पहलुओं पर मन में विचार किया जाए—अर्थात उसका विश्लेषण किया जाए, उसे खंड-खंड कर देखा जाए और हर संभव दृष्टिकोण से उसकी जांच की जाए। 5 जब इस प्रकार की खोज के बाद कोई निर्णय बनता है, तो उसमें संदेह की कोई गुंजाइश नहीं रहती। 5 उचित जांच के बाद पहुंचे निष्कर्ष और दूसरे से सुने हुए निष्कर्ष के बीच का अंतर ठीक वैसा ही है जैसा पत्थर पर बने घर और रेत पर बने घर के बीच होता है। 5

ध्यान तथ्यों के वर्गीकरण और उनके सामान्यीकरण की प्रक्रिया है, और इसके बिना ज्ञान का सुदृढ़ आधार असंभव है। 5 परंतु ध्यान एकाग्रता (Concentration) पर निर्भर करता है, जो सफलता का वास्तविक रहस्य है। 6 एकांत में की जाने वाली एकाग्रता का अर्थ है—शक्ति को एक बिंदु पर केंद्रित करना, जैसे युद्ध के समय सेना को आक्रमण की सीमा पर इकट्ठा किया जाता है। 5 यदि हम रूस पर विजय प्राप्त करना चाहते हैं, तो हमें अपनी सेना को एक ही बिंदु पर केंद्रित करना होगा। 5 यदि हम दस लाख सैनिकों को एक-एक करके अलग-अलग भेजेंगे तो शत्रु के कुछ ही सिपाही उन्हें आसानी से मार गिराएंगे। 5 मुट्ठी भर सैनिक भी बड़ी विजय प्राप्त कर सकते हैं यदि वे अपनी ऊर्जा को बिखरने न दें। 5 स्वामी विवेकानंद लिखते हैं:

"संसार का यह सारा ज्ञान मन की शक्तियों को एकाग्र करने से ही प्राप्त हुआ है। प्रकृति अपने रहस्यों को खोलने के लिए तैयार खड़ी है, यदि हम केवल यह जानते हों कि उस पर प्रहार कैसे करना है; और उस प्रहार की शक्ति केवल एकाग्रता से ही आती है। मानव मन की शक्ति की कोई सीमा नहीं है। वह जितना अधिक एकाग्र होता है, उतनी ही अधिक शक्ति एक बिंदु पर लगाई जा सकती है, और यही सफलता का वास्तविक रहस्य है।" 5, 7

## मन को एकाग्र करने की चार विधियाँ

अब प्रश्न उठता है कि मन को एकाग्र कैसे किया जाए? 7 इसके लिए हिंदू शास्त्रों में चार मुख्य मार्ग बताए गए हैं, जो साधक की योग्यता और रुचि के अनुसार निर्धारित किए जाते हैं: 7

1. हठयोग **(Hatha Yoga):** इसका उद्देश्य भौतिक शरीर को नियंत्रित करके एकाग्रता की स्थिति उत्पन्न करना और इंद्रियों का दमन करके मन को शुद्ध करना है। 7
2. भक्तियोग **(Bhakti Yoga):** यह श्रद्धा और ईश्वर के प्रति अगाध प्रेम का मार्ग है, जिसमें भक्त अपने इष्ट के ध्यान में लीन हो जाता है। 8
3. राजयोग **(Raja Yoga):** यह मन की वृत्तियों को सीधे नियंत्रित करने का मनोवैज्ञानिक विज्ञान है। 7
4. ज्ञानयोग **(Jnana Yoga):** यह ज्ञान और विवेक के द्वारा आत्मा और अनात्मा के भेद को जानकर देवत्व प्राप्त करने का मार्ग है। 7

यद्यपि ये चार मार्ग अलग-अलग स्वभाव के लोगों के लिए बताए गए हैं, परंतु वास्तव में ज्ञानयोग ही सर्वश्रेष्ठ मार्ग है, क्योंकि केवल ज्ञान ही संदेहों का नाश करके हृदय में सच्ची श्रद्धा उत्पन्न कर सकता है। 7 शिक्षित वर्ग के लिए ज्ञानयोग और राजयोग अधिक उपयुक्त हैं, जबकि भावनाप्रधान लोगों के लिए भक्तियोग और शारीरिक रूप से सुदृढ़ लोगों के लिए हठयोग के कठिन नियम बताए गए हैं। 7, 9

परंतु यह चार गुना वर्गीकरण केवल व्यावहारिक सुविधा के लिए है, इसमें कोई पूर्ण वैज्ञानिक सत्यता नहीं है; क्योंकि मोक्ष प्राप्त करने की वैज्ञानिक विधि केवल एक ही हो सकती है, चाहे वह किसी की पसंद के अनुकूल हो या न हो। 9 एक सैनिक को यह चुनने की स्वतंत्रता नहीं दी जाती कि वह परेड करेगा या नहीं; यदि उसे सेना में भर्ती

होना है, तो उसे प्रशिक्षण के नियमों का पालन करना ही होगा! 9 आध्यात्मिक प्रगति के लिए इच्छाशक्ति (Will) के प्रशिक्षण के साथ भी ऐसा ही है। 9

इन चारों प्रणालियों में एकाग्रता का विषय अलग-अलग दिखाई देता है:

- ज्ञानी सीधे अपनी 'आत्मा' को एकाग्रता का विषय बनाता है। 9
- राजयोगी 'समाधि' प्राप्त करना चाहता है जहाँ मन की स्थिरता से पूर्ण ज्ञान और इच्छाहीनता का परमानंद प्राप्त होता है। 9
- भक्त का अपने गुरु या ईश्वर के प्रति अनन्य और उत्कट प्रेम ही उसकी एकाग्रता है (जैसे कोई पुरुष किसी स्त्री के प्रेम में पड़ने पर स्वतः ही एकाग्र हो जाता है)। 9
- हठयोगी अपने शरीर को कष्ट देकर और इंद्रियों को रोककर मन को वश में करता है। 10

परंतु इन बाहरी भिन्नताओं के बावजूद, एकाग्रता का वास्तविक लक्ष्य एक ही है—आत्मा के साथ अपनी एकता का साक्षात्कार करना अर्थात् अपनी आत्मा को सत्-चित्-आनंद की स्थिति में स्थापित करना। 10

## विचारों के साहचर्य का नियम (Association of Ideas)

बहुत से लोग यह शिकायत करते हैं कि उनका मन धार्मिक विषयों में एकाग्र नहीं होता। 10 परंतु यह दोष मन का नहीं है, बल्कि उस साहचर्य (Association) का है जो हम अपने विचारों में बनाते हैं; क्योंकि मन का स्वभाव ही ऐसा है कि वह एक समय में केवल एक ही विचार रख सकता है। 10 साधकों को जो कठिनाई होती है, वह मन की एकाग्रता की कमी के कारण नहीं, बल्कि उपयुक्त साहचर्य की कमी के कारण होती है। 10

उदाहरण के लिए:

- एक व्यापारी का मन स्वतः ही उसके व्यापार के विवरणों में लगा रहता है, उसे वहाँ एकाग्रता के लिए किसी निर्देश की आवश्यकता नहीं होती; 10 परंतु यदि वही व्यापारी किसी के प्रेम में पड़ जाए, तो उसका मन व्यापार से हटकर अपनी प्रेमिका की ओर भागने लगेगा। 10 यहाँ भी प्रेम के कारण एकाग्रता स्वतः ही आ जाती है। 10

इससे यह स्पष्ट होता है कि मन उसी विषय पर सबसे अधिक समय तक टिकता है जिसमें उसकी सबसे गहरी रुचि होती है। 10 और चूंकि हमारी रुचियाँ और इच्छाएँ हमारे विचारों के साहचर्य पर निर्भर करती हैं, इसलिए नए विषय में मन लगाने के लिए पुराने विचारों को बदलकर नए और पवित्र विचारों का साहचर्य बनाना होगा। 10, 11 इसी कारण साधुओं, भक्तों और संतों की संगति (सत्संग) को मन को ईश्वर की ओर मोड़ने का सबसे उत्तम साधन माना गया है। 11 धार्मिक पुस्तकों का निरंतर स्वाध्याय भी इसी परिणाम को जन्म देता है। 11

## आदर्श-पूजा (Ideal-atry) बनाम मूर्ति-पूजा (Idolatry)

यहाँ यह समझना आवश्यक है कि एकाग्रता का विषय किसी वस्तु का केवल नाम, रूप या आकार नहीं होता, बल्कि उसका महत्व **(Significance)** होता है। 11 मन किसी ऐसे विषय पर अधिक समय तक एकाग्र नहीं रह सकता जिसमें चिंतन के लिए पर्याप्त गहराई और विस्तार न हो। 11 जैसे एक शतरंज का खिलाड़ी केवल बोर्ड और गोटियों को देखने से ऊब जाएगा, परंतु खेल की चालों की जटिलता में घंटों डूबा रह सकता है। 11

यही मूर्तिपूजा (Idolatry) के विरुद्ध सबसे बड़ा तर्क है। 11 यदि एकाग्रता का विषय केवल मूर्ति का नाम और बाहरी रूप ही है, तो मन शीघ्र ही उन विवरणों को सीखकर ऊब जाएगा और भटकने लगेगा। 11 परंतु कोई भी समझदार व्यक्ति केवल मंदिर के पत्थर को ईश्वर मानकर नहीं पूजता। 11 वह वास्तव में उस परमात्मा की पूजा करता है जिसकी प्रतीक वह मूर्ति बन जाती है। 11 चूंकि आत्मा दिव्य गुणों का अनंत भंडार है, इसलिए केवल वही एकमात्र ऐसा विषय है जिसमें मन अनंत काल तक बिना किसी ऊब के ध्यानमग्न रह सकता है। 11

संसार के सभी महान धर्मों ने एकाग्रता के इस मूल्य को स्वीकार किया है: 11

- हज़रत मुहम्मद ने अल्लाह की इच्छा के प्रति पूर्ण समर्पण (इस्लाम/Resignation) को जन्नत प्राप्त करने का मार्ग बताया। 11
- ईसा मसीह ने स्वर्ग के राज्य को प्राप्त करने के लिए श्रद्धा, ज्ञान और सर्वस्व-त्याग का उपदेश दिया। 12

इन सभी प्रणालियों में एकाग्रता का मुख्य उद्देश्य दो ही बातें हैं:

1. द्वैत का निषेध: ईश्वर और मनुष्य के बीच उस काल्पनिक खाई को नकारना जो पारंपरिक पुरोहितवाद ने बनाई है। 12
2. आत्मा के देवत्व की घोषणा: अपने वास्तविक आत्म-स्वरूप को परमात्मा के रूप में स्वीकार करना। 12

## सच्चा सुख क्या है?

जब हम ध्यान में गहराई से उतरते हैं, तो हमें समझ आता है कि संसार के लोग जिसे 'सुख' मानते हैं, वह वास्तव में दुःख का ही एक छिपा हुआ रूप है। 12, 13 आधुनिक मनुष्य योगी को एक निकम्मा और काल्पनिक दुनिया में जीने वाला व्यक्ति मानता है, परंतु इसका कारण यह है कि उसे स्वयं सच्चे सुख का कोई भान नहीं है। 12, 13
जरा ठंडे दिमाग से सोचिए:

- क्या बहुत सारा धन इकट्ठा करना, घर को आलीशान फर्नीचर से सजाना, दावतों में जाना, मुकदमों में उलझना, युद्धों में अपनों का खून बहाना, दूसरों को हीन समझना और अंत में अपनी थकी हुई इंद्रियों को कृत्रिम उत्तेजकों में डुबो देना सुख है? 13
- या फिरconvention (रूढ़ियों) के बंधनों को तोड़ देना, हीनता की भावना से ऊपर उठ जाना, सांसारिक चिंताओं से मुक्त होना, संपूर्ण सृष्टि के साथ शांति से जीना, चारों ओर प्रेम और सद्भावना की किरणें फैलाना, और इसी पृथ्वी पर रहते हुए काल, रोग और नियति का स्वामी बन जाना सुख है? 13

एक बार अमेरिका में स्वामी रामतीर्थ से किसी ने पूछा: *"आप अपने एशिया के इस आलस्य (Laziness) को अमेरिका में क्यों फैला रहे हैं? बाहर निकलिए और कुछ काम करिए, भलाई करिए।"* 13
स्वामी जी ने मुस्कुराकर उत्तर दिया:
*"जहाँ तक भलाई करने (Doing good) का प्रश्न है, क्या वह व्यवसाय पहले से ही बहुत अधिक भरा हुआ नहीं है? मुझे मेरे और मेरे राम (ईश्वर) के साथ अकेला छोड़ दो। आलस्य? पूर्वी आलस्य? मेरे प्रिय मित्र! आलस्य क्या है? क्या रूढ़ियों के दलदल में फंसे रहना, फैशन और रीति-रिवाजों की धारा में बहते रहना, भौतिक संपत्तियों के कुएं में डूब जाना और सोने के सिक्के बनाने में वह अमूल्य समय नष्ट कर देना जो ईश्वर का होना चाहिए था—क्या यह आलस्य नहीं है? क्या दूसरों के विचारों के अनुसार जीना आलस्य नहीं है? क्या अपने भीतर के परमात्मा को खो देना आलस्य नहीं है? यह अंधाधुंध भागदौड़ और चिंता किसलिए? डॉलर जमा करने के लिए? और फिर क्या? क्या दूसरों की तरह भोग भोगने के लिए? नहीं, भोग के पीछे भागने में कोई भोग नहीं है।*
*हे विचारों के गुलामों! अपने सुख को भविष्य के लिए क्यों टालते हो? तुम यहाँ इस प्राकृतिक बगीचे में, इस सुंदर पहाड़ी नदी के किनारे बैठकर शुद्ध हवा, चांदी जैसी धूप और हरी-भरी धरती का आनंद क्यों नहीं लेते जो तुम्हारे सगे संबंधी हैं—जिनसे तुम्हारा रक्त बना है? सभ्य देश आज अपनी कोठरियों और कमरों के बंद पिंजरों में कैद होकर प्रकृति से दूर हो गए हैं। ऐश्वर्य और प्रतिष्ठा के अहंकार में उन्होंने खुद को पूरी सृष्टि से अलग कर लिया है। अपने ऊपर दया करो मेरे मित्रों, अपने ऊपर दया करो। दूसरों को लूटकर इकट्ठा किया गया धन तुम्हें केवल आलीशान होटलों के बीमार करने वाले भोजन दे सकता है, तुम्हारे चेहरों को पीला और अप्राकृतिक बना सकता है। कृत्रिम सुखों के झांसे में आकर उस वास्तविक आनंद को मत खोओ। आओ, मेरे साथ इस हरी घास पर लेट जाओ और यहाँ और अभी (Now and Here) का आनंद लो।"* 14
योगी कवि रामतीर्थ गाते हैं:
*"चंद्रमा उदय हुआ है, वे चंद्रमा को देखते हैं,मैं तुम्हारी भृकुटी के प्रकाश का पान करता हूँ।वे बड़े मेले लगाते हैं, वहाँ भारी भीड़ उमड़ती है,मैं तुम्हें देखता हूँ, जो प्रकाश के स्रोत हो।नहीं, किसी डॉक्टर या हकीम को मत बुलाओ,मेरे लिए तो मेरा यह दर्द ही परम आनंद है!अलविदा, ओ नगर के निवासियों, नगरों को अलविदा!आओ, हे चक्करदार, दिव्य, अतीन्द्रिय ऊँचाइयों!अलविदा, ओ फैशन और रीतियों, पुण्य और पापों,अलविदा, ओ नियमों, समझौतों, शांति और युद्धों,अलविदा, ओ मित्रों, शत्रुओं, और सांसारिक बंधनों!अलविदा, ओ देश और काल, अलविदा!अलविदा, ओ संसार, रात और दिन!मेरा प्रेम फूल है, संगीत है, प्रकाश है;मेरा प्रेम दिन है, रात है;मुझमें सारा अंधकार और प्रकाश विलीन हो गया है।ओह, कैसी अद्भुत शांति और आनंद है!ओह, मुझे और मेरे प्रिय को अकेला छोड़ दो,अलविदा, अलविदा, अलविदा!"* 15

यह योगी का उस समय का विदाई गीत है जब वह इस नश्वर और झूठे संसार को छोड़कर वास्तविक धरातल (आत्मा) में लीन होने जाता है। 15 यह उस आत्मा का मधुर संगीत है जिसने जन्म-मरण के चक्र की माया को पहचान लिया है और दुःख की इस घाटी के पार अपने सुखद घर की झलक पा ली है। 15

## अनासक्ति का नियम और इंद्रियजन्य भोग का सत्य

अध्यात्म के मार्ग पर सबसे महत्वपूर्ण नियम है—कर्म के फलों के प्रति अनासक्ति **(Non-attachment to the fruit of action)**। 16 कर्म तो सभी को करना पड़ता है ताकि जीवन जड़ न हो जाए, परंतु बुद्धिमत्ता इसमें है कि हम अपने सुख को उसके परिणाम पर निर्भर न होने दें। 16

वेदांत में 'कार्य' (Work) का अर्थ सांसारिक धन कमाने के लिए की जाने वाली मजदूरी नहीं है। 16 स्वामी रामतीर्थ के अनुसार: *"वेदांत में कार्य का अर्थ है—वास्तविक आत्मा (Real Self) के साथ सामंजस्यपूर्ण कंपन और संपूर्ण ब्रह्मांड के साथ एकरूपता स्थापित करना। इस निःस्वार्थ मिलन को ही असली कार्य कहा जाता है, जिसे संसारी लोग अक्सर 'अकर्म' या 'आलस्य' का नाम देते हैं।"* 16

जब हम अनासक्ति को व्यावहारिक जीवन में उतारते हैं, तो इसका अर्थ वासनाओं और इच्छाओं का दमन होता है। 8 अनासक्ति का यह अर्थ नहीं है कि हम धर्म के नाम पर इंद्रियों को खुली छूट दे दें; 8 क्योंकि बिना तीव्र रुचि के मनुष्य कोई कार्य नहीं कर सकता, और यदि वह बुरे कार्यों में लिप्त रहता है, तो इसका स्पष्ट अर्थ है कि उसके भीतर अभी भी सांसारिक वासनाएँ जीवित हैं। 8

यहाँ यह समझना आवश्यक है कि इंद्रियजन्य भोगों का वास्तविक सत्य क्या है**?** क्या सुख और दुःख की अनुभूति बाहरी वस्तुओं में होती है या हमारे अपने मन में? 8

- यदि सुख और दुःख वस्तुओं के अपने गुण होते, तो वे सभी को एक समान प्रभावित करते। 8, 17 परंतु स्वादिष्ट भोजन भी पेट भरा होने पर अरुचिकर लगता है और बीमारी में कड़वा प्रतीत होता है; 17 जबकि भूख के समय एक साधारण भोजन भी अमृत के समान स्वादिष्ट लगता है। 17
- एक सुंदर स्त्री को देखकर एक व्यक्ति उसे माँ के समान आदर देता है, दूसरा उसे अपनी बेटी मानता है, तीसरा अपनी पत्नी के रूप में प्रेम करता है और चौथा उसे देखकर वासना से भर जाता है। 17 वस्तु तो वही है, परंतु उससे मिलने वाला अनुभव और सुख चारों के लिए अलग-अलग है। 17

अतः सिद्ध होता है कि सुख और दुःख बाहरी वस्तुओं में नहीं**,** बल्कि हमारे अपने मन की अवस्था और दृष्टिकोण में होते हैं। 17 योगी इस रहस्य को जानता है, इसलिए वह बाहरी वस्तुओं के पीछे भागना बंद कर देता है और सुख के मूल स्रोत—अपनी ही आत्मा—के आनंद में डूब जाता है। 17

बाइबिल का वह वचन अब आसानी से समझा जा सकता है जिसमें कहा गया है: *"जो कोई मेरे (आत्मा के) नाम के लिए अपने घरों, भाइयों, बहनों, पिता, माता, पत्नी, बच्चों या भूमि का त्याग करेगा, उसे सौ गुना प्रतिफल मिलेगा और वह अनंत जीवन का उत्तराधिकारी होगा"* (मैथ्यू xix. 29)। 17, 18 इसका सीधा अर्थ यह है कि जब हम आत्मा के लिए इंद्रियों के सुखों और सांसारिक मोह का त्याग करते हैं, तो हमें आत्म-साक्षात्कार का सौ गुना आनंद प्राप्त होता है। 17, 18

योगी जब इस अवस्था में दृढ़ हो जाता है, तो उसे समाधि **(Samadhi)** प्राप्त होती है। 18 तब प्रकृति की कोई भी शक्ति उसका मार्ग नहीं रोक सकती। 18 वह प्रकृति और मृत्यु का विजेता बनकर खड़ा होता है। 18

## मन की चुंबकीय शक्ति और सम्मोहन का मनोविज्ञान

मनुष्य का तंत्रिका तंत्र (Nervous system) ध्रुवीकृत कोशिकाओं (Polarized cells) से बना है। 19 साधारण मनुष्य का मन एक ऐसे लोहे के टुकड़े के समान है जिसके चुंबकीय अणु अस्त-व्यस्त पड़े हैं, जिससे उनकी शक्तियाँ आपस में टकराकर एक-दूसरे को नष्ट (Neutralize) कर देती हैं। 19, 20

परंतु योग के प्रभाव से, मन के ये सभी कण एक ही दिशा में व्यवस्थित हो जाते हैं, जिससे मन एक अत्यंत शक्तिशाली जीवंत चुंबक बन जाता है। 20 एकाग्रता की प्रक्रिया मन के अणुओं को इसी चुंबकीय सिद्धांत पर पुनर्गठित करती है। 20 जब हमारे मन के सभी अणुओं के ध्रुव जीवन (आत्मा) की दिशा में संरेखित हो जाते हैं, तो

हमारी शक्ति और सुख की कोई सीमा नहीं रहती! 19 यही स्वास्थ्य, शक्ति और कथित 'चमत्कारों' का रहस्य है। 19

विचारों का मन और शरीर पर कितना गहरा प्रभाव पड़ता है, इसे आधुनिक मनोविज्ञान में उत्तर-सम्मोहक सुझाव **(Post-hypnotic suggestion)** के द्वारा सिद्ध किया जा चुका है। 19 सम्मोहन की स्थिति में जब किसी व्यक्ति के बुद्धि के पहरेदार (Sentinel of reason) को सुला दिया जाता है, तो उसका व्यक्तिपरक मन (Subjective Mind/Sub-conscious) सक्रिय हो जाता है। 19, 21 इस अवस्था में यदि उसके शरीर पर एक साधारण डाक टिकट चिपकाकर यह सुझाव दिया जाए कि यह एक जलता हुआ कोयला है, तो उसके शरीर पर वास्तव में छाला पड़ जाता है! 22 यदि उसे अमोनिया सुंघाकर कहा जाए कि यह कपूर है, तो वह बिना किसी कष्ट के उसे सूंघ लेता है। 22

इसका कारण यह है कि व्यक्तिपरक मन (आत्मा) तर्क नहीं करता; वह सुझाव को सत्य मानकर शरीर की कोशिकाओं को उसी के अनुसार संचालित करने लगता है। 22

- डॉ. राम नारायण लिखते हैं कि जब हम बुद्धि की स्वैच्छिक गतिविधियों को दबा देते हैं, तो व्यक्तिपरक मन पूरी तरह स्वतंत्र होकर कार्य करने लगता है। 22
- अतः, रोग और दुःख का मूल कारण भी हमारे गलत वैचारिक सुझाव (Adverse suggestions) ही हैं। 23, 24 यदि हम बचपन से ही खुद को कमजोर, पापी और नश्वर मानते आए हैं, तो हमारा शरीर भी वैसा ही हो जाता है। 23, 24
- इसका उपचार केवल विपरीत विचारों के सुझाव (Auto-suggestion) द्वारा ही संभव है। 23 हमें अपने मन में स्वास्थ्य, अमरता और देवत्व के विचारों को गहराई से बैठाना होगा। 24

## चमत्कारों का वैज्ञानिक विश्लेषण

धर्म ने इन नियमों को आधुनिक विज्ञान के जन्म से हजारों वर्ष पहले ही जान लिया था। 24 अतीत के पैगंबरों और योगियों द्वारा किए गए कथित 'चमत्कार' वास्तव में इसी मानसिक शक्ति और इच्छाशक्ति (Will-power) के वैज्ञानिक परिणाम थे। 25 जब हम उन कारणों को नहीं जानते जो किसी घटना को जन्म देते हैं, तो हम उसे 'चमत्कार' कह देते हैं; परंतु जब कारण स्पष्ट हो जाते हैं, तो वह एक प्राकृतिक घटना बन जाती है। 18, 20

महाभारत से एक प्रसिद्ध घटना का उदाहरण लिया जा सकता है: 25

- जब पांडव वनवास में थे, तब दुर्वासा ऋषि अपने दस हजार शिष्यों के साथ उनके यहाँ पहुँचे। 25 उस समय द्रौपदी के पास भोजन समाप्त हो चुका था और वे ऋषि के क्रोध से अत्यंत भयभीत थे। 25, 26 द्रौपदी की प्रार्थना पर कृष्ण प्रकट हुए और उन्होंने बर्तन में बची हुई एक छोटी सी साग की पत्ती को चबाकर कहा कि "मेरा पेट भर गया"। 26 उधर नदी में स्नान कर रहे दुर्वासा और उनके दस हजार शिष्यों का पेट अचानक इतना भर गया कि वे डकारें लेने लगे और बिना भोजन किए ही वहाँ से भाग गए! 26

यद्यपि आधुनिक बुद्धिजीवी इसे केवल एक पौराणिक कथा मान सकते हैं, परंतु डॉ. कोचे (Dr. Coche) द्वारा किए गए एक मनोवैज्ञानिक प्रयोग से इसकी पुष्टि होती है: 26

डॉ. कोचे ने अपने और अपनी सम्मोहित पात्रा *(Subject)* के बीच एक पर्दा लगा दिया। उन्होंने अपनी सहायिका से उस पात्रा को एक गिलास सादा पानी देने को कहा। जब वह पानी पीने ही वाली थी, तब डॉ. कोचे ने अपनी जीभ पर थोड़ी सी लाल मिर्च *(Cayenne pepper)* रखी और मन में उस स्वाद को तीव्रता से महसूस किया। जैसे ही पात्रा ने पानी का गिलास अपने होठों से लगाया, वह चिल्ला उठी—"किसी ने मेरे मुँह में मिर्च डाल दी है!" 26

एक आधुनिक अन्वेषक की एकाग्रता और एक महान योगी की इच्छाशक्ति के बीच का अंतर वैसा ही है जैसा एक चिंगारी और सूर्य के बीच होता है। 26 डॉ. कोचे केवल एक व्यक्ति के स्वाद को प्रभावित कर सके, परंतु योगेश्वर कृष्ण संपूर्ण जनसमूह के पेट को प्रभावित करने की क्षमता रखते थे। 26

ईसा मसीह द्वारा किए गए उपचार भी इसी मानसिक चिकित्सा के नियम पर आधारित थे। 27 वे रोगी से हमेशा पूछते थे—"क्या तुम्हें विश्वास है?" और ठीक होने पर कहते थे—"तुम्हारे विश्वास ने ही तुम्हें चंगा किया है।" 28

## विपरीत प्रयास का नियम (Law of Reversed Effort)

एमिल कूए (Monsieur Emile Coué) द्वारा खोजा गया **'विपरीत प्रयास का नियम'** यह सिद्ध करता है कि जब कल्पना (Imagination) और इच्छाशक्ति (Will) के बीच संघर्ष होता है, तो हमेशा कल्पना की ही विजय होती है। 29, 30

- यदि आपके सिर में तेज दर्द हो रहा है और आप बलपूर्वक खुद से कहें—"मैं इस दर्द को दूर करने की इच्छा करता हूँ *(I will)*", तो दर्द और अधिक बढ़ जाएगा; 30 क्योंकि आपकी कल्पना में अभी भी दर्द की ही छवि प्रधान है और आपका बलपूर्वक प्रयास केवल उस दर्द को और अधिक रेखांकित कर रहा है। 30
- इसके विपरीत, यदि आप शांत बैठकर कल्पना करें कि "मेरा दर्द धीरे-धीरे समाप्त हो रहा है" और इसके साथ कोई मानसिक संघर्ष न करें, तो दर्द तुरंत गायब हो जाएगा। 30 इच्छाशक्ति हमेशा कल्पना द्वारा दिए गए लक्ष्य के अधीन कार्य करती है। 30

## जाइरस की मृत पुत्री को जीवित करने का रहस्य

बाइबिल में ईसा मसीह द्वारा जाइरस की मृत पुत्री को पुनः जीवित करने की जो घटना मिलती है, उसका यौगिक और मनोवैज्ञानिक आधार अत्यंत स्पष्ट है: 30, 31

- **शरीर और आत्मा का संबंध:** शरीर कोशिकाओं का एक संघ है जो आत्मा की शक्ति से संचालित होता है। 31 मृत्यु का अर्थ केवल केंद्रीय चश्मे (आत्मा) और शरीर के अंगों के बीच संपर्क का टूट जाना है। 32 यदि कोई समर्थ योगी उस टूटे हुए संपर्क को अपनी संकल्पशक्ति से पुनः जोड़ दे, तो मृत शरीर पुनः जीवित हो उठता है। 32
- **ईसा मसीह की प्रक्रिया का विश्लेषण:**
- ईसा ने सबसे पहले लड़की के पिता से कहा—"वह मरी नहीं, केवल सो रही है"। 33 उन्होंने ऐसा पिता के व्यक्तिपरक मन को शांत करने के लिए किया ताकि उसके नकारात्मक विचार लड़की पर कोई बुरा प्रभाव न डालें। 33
- फिर उन्होंने रोने-पीटने वाले संगीतकारों और भीड़ को कमरे से बाहर निकाल दिया, क्योंकि उनकी नकारात्मक और शोकपूर्ण तरंगें वातावरण को दूषित कर रही थीं। 33
- वे अपने तीन सबसे अधिक आध्यात्मिक रूप से विकसित शिष्यों (पीटर, जेम्स और जॉन) को अपने साथ कमरे के भीतर ले गए, ताकि उनकी सामूहिक एकाग्रता (Collective concentration) की शक्ति से एक अत्यंत सकारात्मक ऊर्जा-क्षेत्र का निर्माण किया जा सके। 33
- इसके बाद उन्होंने एक शक्तिशाली सुझाव (Suggestion) के द्वारा उस कन्या की आत्मा को पुनः शरीर में प्रवेश करने का आदेश दिया और वह उठ खड़ी हुई। 33

## आहार, मंत्र साधना और 'ॐ' का विज्ञान

- **आहार की शुद्धि:** कोई भी व्यक्ति मदिरा और मांस का सेवन करते हुए योग की शक्तियों को प्राप्त नहीं कर सकता। 34 ईसा मसीह द्वारा मांस और मदिरा के सेवन की जो बातें बाइबिल में मिलती हैं, वे विशुद्ध रूप से रूपकात्मक (Allegorical) हैं; 35 जहाँ 'मांस' का अर्थ आत्मा को पोषण देने वाला 'वैराग्य' है और 'मदिरा' का अर्थ 'आत्म-चिंतन' का परमानंद है। 35
- **मंत्र साधना:** विश्वास को दृढ़ करने के लिए पवित्र मंत्रों का उच्चारण अत्यंत उपयोगी है। 36 इनमें **'ॐ' (Aum/Om)** सर्वश्रेष्ठ और सर्वाधिक वैज्ञानिक महामंत्र है। 36 जैन दर्शन के अनुसार 'ॐ' पंचपरमेष्ठी (अरिहंत, अशरीरी/सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और मुनि) के प्रारंभिक अक्षरों का अनूठा संकलन है। 36 स्वामी रामतीर्थ लिखते हैं कि 'ॐ' का उच्चारण करते समय साधक को यह भाव रखना चाहिए कि—"मैं ही समस्त प्रकाशों का प्रकाश हूँ; मैं ही वास्तविक सूर्य हूँ जिसके चारों ओर ये सारे ग्रह चक्कर काट रहे हैं।" 36

## भक्तियोग का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण

स्वामी रामकृष्ण परमहंस से जब एक शिष्य ने पूछा कि क्या ईश्वर को देखा जा सकता है, तो उन्होंने उत्तर दिया: "हाँ, अवश्य। यदि तुम्हारी व्याकुलता ईश्वर के लिए वैसी ही हो जैसे एक पतिव्रता पत्नी की अपने पति के लिए, एक माँ की अपने बच्चे के लिए और एक संसारी की धन के लिए होती है—यदि इन तीनों आसाक्तियों को मिला दिया जाए और उतनी तीव्रता ईश्वर के लिए हो, तो ईश्वर का दर्शन अवश्य होगा।" 37

परंतु भक्तियोग का वास्तविक मर्म यह है कि भक्ति कोई व्यापार या याचना **(Bargaining)** नहीं है। 38 जो भगवान के सामने हाथ फैलाकर धन, संतान या स्वर्ग की भीख मांगता है, वह भक्त नहीं, बल्कि एक आध्यात्मिक भिखारी है। 38 सच्ची भक्ति केवल प्रेम के लिए प्रेम करना है। 39

नारद भक्ति सूत्र के अनुसार, प्रेम तीन प्रकार का होता है:

1. विषयासक्त प्रेम**:** जहाँ केवल अपना सुख देखना होता है (लेना ही लेना, देना कुछ नहीं)। 39
2. व्यावहारिक प्रेम**:** जहाँ लेनदेन का संबंध होता है (तुम मुझे प्रेम करो, मैं तुम्हें करूँगा)। 39
3. अनन्य भक्ति**:** जहाँ केवल समर्पण होता है, वापसी में कुछ भी पाने की इच्छा नहीं होती। 39

सच्ची भक्ति का अंतिम लक्ष्य अपनी ही आत्मा के वास्तविक स्वरूप को परमात्मा के रूप में पहचानना है। 40 जब हृदय पूरी तरह शुद्ध हो जाता है, तो उसमें भगवान का प्रतिबिंब दिखाई देने लगता है; 41 जैसे एक शांत और निर्मल झील के तल में पड़ी वस्तुएँ स्पष्ट दिखाई देती हैं, वैसे ही शांत मन रूपी दर्पण में परमात्मा का दर्शन होता है। 41

## अष्टांग योग के आठ चरण (The Eight Steps of Yoga)

महर्षि पतंजलि ने योग के आठ चरण बताए हैं जो साधक को क्रमिक रूप से मोक्ष तक ले जाते हैं: 42

```
[यम] ➔ [नियम] ➔ [आसन] ➔ [प्राणायाम] ➔ [प्रत्याहार] ➔ [धारणा] ➔ [ध्यान] ➔ [समाधि]
```

1. यम **(Yama):** अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह। 42
2. नियम **(Niyama):** शौच (पवित्रता), संतोष, तप, स्वाध्याय और ईश्वर-प्रणिधान (समर्पण)। 42
3. आसन **(Asana):** ध्यान के लिए स्थिर और आरामदायक मुद्रा। 42 रीढ़ की हड्डी, गर्दन और सिर को एक सीधी रेखा में रखना अत्यंत आवश्यक है ताकि तंत्रिका तंत्र (Nerve currents) में ऊर्जा का प्रवाह निर्बाध हो सके। 43, 44
4. प्राणायाम **(Pranayama):** श्वास और जीवनी शक्ति (Prana) का नियंत्रण। 42, 45 हृदय की धड़कन के साथ श्वास का लयबद्ध (Rhythmic) नियंत्रण हमारे शरीर को इच्छाशक्ति की एक विशाल बैटरी बना देता है। 46
5. प्रत्याहार **(Pratyahara):** इंद्रियों को बाहरी विषयों से हटाकर भीतर की ओर मोड़ना। 42, 47
6. धारणा **(Dharana):** मन को किसी एक बिंदु (जैसे हृदय चक्र या आज्ञा चक्र) पर स्थिर करना। 42, 47
7. ध्यान **(Dhyana):** मन की उस एकाग्र अवस्था को बिना किसी विक्षेप के निरंतर बनाए रखना। 42, 47
8. समाधि **(Samadhi):** वह परम शांत अवस्था जहाँ ध्याता, ध्यान और ध्येय का भेद समाप्त हो जाता है और आत्मा अपने विशुद्ध आनंदमयी स्वरूप में स्थित हो जाती है। 42, 47

## "क्या नासरत से भी कोई अच्छी चीज़ निकल सकती है?"

प्राचीन काल में ज्ञानमार्गियों (Jnana Yoga) और भक्तिमार्गियों (Bhakti/Nazareth) के बीच एक बड़ा बौद्धिक विवाद चलता था। 48 ज्ञानमार्गी अक्सर भक्तिमार्गियों का उपहास उड़ाने के लिए कहते थे—"क्या नासरत से भी कोई अच्छी चीज़ निकल सकती है?" (यूहन्ना i. 46)। 48, 49

- नासरत **(Nazareth)** कोई भौगोलिक गाँव नहीं था, बल्कि यह इब्रानी शब्द **'नाज़िर' (Nazir)** से बना था जिसका अर्थ होता है—एक अनन्य भक्त या समर्पित साधक। 48, 49

- अतः इस व्यंग्य का दार्शनिक अर्थ यह था कि—*"क्या केवल भावुक भक्ति के मार्ग से भी कभी मोक्ष जैसा परम कल्याण (ज्ञान) प्राप्त हो सकता है?"* 49

परंतु सत्य यह है कि ज्ञान और भक्ति दोनों एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। 50, 51 भक्ति के बिना ज्ञान शुष्क और नीरस हो जाता है, और ज्ञान के बिना भक्ति अंधविश्वास में बदल जाती है। 50, 51 जब श्रद्धा ज्ञान में बदलती है और ज्ञान आचरण (चरित्र) में ढलता है, तभी मोक्ष का मार्ग प्रशस्त होता है। 50, 52

जैन दर्शन का त्रिरत्न सिद्धांत इसी परम सत्य की घोषणा करता है:

$$\text{सम्यक् दर्शन (Right Faith)} + \text{सम्यक् ज्ञान (Right Knowledge)} + \text{सम्यक् चरित्र (Right Conduct)} = \text{मोक्ष (Liberation)}$$ 50, 52

जब ज्ञान की इस 'कुंजी' को हमारे अज्ञान के तालों पर लगाया जाता है, तो भ्रम के सारे कपाट टूट जाते हैं, और मनुष्य अपने शुद्ध, पापरहित रूप में प्रकट होता है! 53

## अध्याय का सारांश (हिंदी तालिका)

यौगिक चरण / संकल्पना,आध्यात्मिक एवं वैज्ञानिक अर्थ
योग (Yoga),इंद्रियों के विषयों से विलग होकर आत्मा का परमात्मा से एकीकरण। 2
एकाग्रता (Concentration),"मानसिक और आत्मिक ऊर्जा को एक बिंदु पर केंद्रित करने का परम विज्ञान। 5, 6"
अनासक्ति (Non-attachment),"कर्मों को करते हुए भी उनके फलों के प्रति उदासीन रहना (संसार को स्वप्न मानना)। 8, 16"
समाधि (Samadhi),"मन की वह परम शांत अवस्था जहाँ केवल आत्मा का शुद्ध प्रकाश चमकता है। 18, 47"
विपरीत प्रयास का नियम,"कल्पना और इच्छाशक्ति के संघर्ष में हमेशा कल्पना की ही विजय होना। 29, 30"
त्रिरत्न (Ratna Trai),"सम्यक् दर्शन, सम्यक् ज्ञान और सम्यक् चरित्र का पूर्ण वैज्ञानिक समन्वय। 50, 52"
ग्योथे (Goethe) के शब्दों में:

**"मैं तुम्हें मनुष्य का सर्वोच्च कर्तव्य बताता हूँ।मेरे अस्तित्व से पहले कोई संसार नहीं था, यह मेरी ही रचना है।यह मैं ही था जिसने समुद्र के गर्भ से सूर्य को ऊपर उठाया था,और चंद्रमा ने भी अपनी परिवर्तनशील यात्रा मेरे ही इशारे पर शुरू की थी!"** 52, 54